



प्रकाशन हेतु अनुमोदित

**छत्तीसगढ़, उच्च न्यायालय, बिलासपुर**

**प्रथम अपील सं. 196/2016**

**निर्णय सुरक्षित रखा गया : 04.09.2025**

**निर्णय पारित किया गया : 16.12.2025**

1 - श्रीमती अंजना बनोटिया (मृत; विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से) माननीय न्यायालय के 17-07-2025 दिनांकित आदेश के अनुसार।

1.1 - दीपक कुमार बनोटिया, पिता- स्वर्गीय संतोष बनोटिया, आयु- लगभग 48 वर्ष, निवासी- राधा कृष्ण मंदिर, वार्ड क्र. 28, पचरी पारा, दुर्ग, छत्तीसगढ़।

1.2 - श्रीमती हर्षलता लाल, पति- स्वर्गीय राजीव लाल, आयु- लगभग 54 वर्ष, राधा कृष्ण मंदिर, वार्ड क्र. 28, पचरी पारा, दुर्ग, छत्तीसगढ़।

..... अपीलार्थी/वादी

**बनाम**

1 - देवनारायण गौड़ (मृत; विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से)- श्रीमति रुकमणि, पति- स्वर्गीय देवनारायण, आयु- लगभग 45 वर्ष, निवासी- ग्राम महौद पसगांव, चिखला कला, पोस्ट- महौद मचंदुर, तहसील अंबागढ़ चौकी, जिला- राजनंदगांव, छत्तीसगढ़।

1.1 - पिंढू, पिता- स्वर्गीय देवनारायण, आयु- लगभग 25 वर्ष, निवासी- ग्राम महौद, पसगांव, चिखला कला, पोस्ट महौद मचंदुर,



तहसील अम्बागढ़ चौकी, जिला- राजनंदगांव, छत्तीसगढ़।

1.2 - आशीष, पिता- स्वर्गीय देवनारायण, आयु- लगभग 23 वर्ष,  
निवासी- ग्राम महौद, पसगांव, चिखला कला, पोस्ट महौद मचंदुर,  
तहसील अम्बागढ़ चौकी, जिला- राजनंदगांव, छत्तीसगढ़।

1.3 - लोकेश, पिता- स्वर्गीय देवनारायण, आयु- लगभग 23 वर्ष,  
निवासी- ग्राम महौद, पसगांव, चिखला कला, पोस्ट महौद मचंदुर,  
तहसील अम्बागढ़ चौकी, जिला- राजनंदगांव, छत्तीसगढ़।

2 - श्रीमती शशि यादव, पति- भरत सिंह यादव, आयु- लगभग 36 वर्ष, निवासी- संतोषी  
चौक, वार्ड सं. 42 कसारडीह, तहसील व जिला- दुर्ग छत्तीसगढ़।

3 - भरत सिंह यादव, पिता- बंसी लाल यादव, आयु- लगभग 42 वर्ष, निवासी- संतोषी  
चौक, वार्ड सं. 42 कसारडीह, तहसील व जिला- दुर्ग छत्तीसगढ़।

..... प्रत्यर्थी

अपीलार्थियों की ओर से : श्री बी. पी. शर्मा, अधिवक्ता सह श्री करुणेन्द्र नारायण  
सिंह, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से : श्री अमीयकांत तिवारी, अधिवक्ता

**माननीय न्यायमूर्ति श्री नरेन्द्र कुमार व्यास**

**सी.ए.व्ही. निर्णय**

1. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के तहत पहली अपील वादी द्वारा दायर की गई है, जिसमें माननीय चौथे अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, दुर्ग (छत्तीसगढ़) द्वारा सिविल वाद सं. 21-A/2013 में दिनांक 29.04.2016 को पारित निर्णय और डिक्री को चुनौती दी गई है। इस निर्णय के माध्यम से, विचारण न्यायालय ने वादी द्वारा दायर वाद को खारिज कर दिया है और उत्तरवादियों द्वारा दायर प्रति-दावे को स्वीकार कर लिया है; साथ ही,



न्यायालय ने उत्तरवादी सं. 3 और 4 को खसरा सं. 1083/8 (क्षेत्रफल 0.005 हेक्टेयर) वाले मकान का स्वामी घोषित किया है, जो ग्राम पचरी पारा, कृष्ण मंदिर के निकट, दुर्ग में स्थित है। इसके अतिरिक्त, न्यायालय ने वादी को निर्देश दिया है कि वह निर्णय की तिथि से दो माह के भीतर उक्त मकान का खाली कब्जा सौंप दे; यदि वादी द्वारा उत्तरवादी सं. 3 और 4 को खाली कब्जा नहीं सौंपा जाता है, तो वादी उत्तरवादी सं. 3 और 4 को 100/- रुपये प्रतिदिन की दर से प्रतिकर देने के लिए उत्तरदायी होगा।

2. सुविधा के लिए, पक्षकारों को विचारण न्यायालय के समक्ष व्यवहार वाद सं. 21-A/2013 में दर्शायी गई उनकी स्थिति में संदर्भित किया जाएगा।

3. वादपत्र में उल्लिखित संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि वादी ने संविदा, घोषणा और स्थायी निषेधाज्ञा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष 05.01.2004 को एक वाद प्रस्तुत किया जिसमें मुख्य रूप से यह तर्क किया गया था कि;

(क) वादपत्र ने कृष्ण मंदिर के पास, पचरी पारा, दुर्ग स्थित उत्तरवादी सं. 1 और 2 का मकान (इसके बाद वाद संपत्ति के रूप में संदर्भित) किराए पर लिया है। वादी अपने बच्चों के साथ वहाँ रह रही थी। वादी का यह भी प्रकरण है कि वादी सं. 1 और 2 ने वादी को वाद मकान को रु.1,05,000/- के विक्रय प्रतिफल के लिए बेचने का प्रस्ताव रखा था। ऐसे में वादी ने दिनांक 07.07.2003 को उत्तरवादी सं. 1 और 2 को रु. 18,200/- का अग्रिम राशि के रूप में भुगतान किया। उत्तरवादी सं. 1 और 2 द्वारा यह भी सहमति व्यक्त की गई है कि 2003 के बाद वे शेष विक्रय प्रतिफल का भुगतान किए जाने के बाद वाद मकान के विक्रय विलेख को निष्पादित करेंगे।

(ख) यह भी वादी का प्रकरण है कि 07.07.2003 को अग्रिम धन प्राप्त करने के बाद उत्तरवादी सं. 1 और 2 ने वादी को मौखिक निर्देश दिया था कि उन्हें पहले ही जून 2003 तक वादी से मासिक किराया प्राप्त किया है और चूंकि उनके मध्य विक्रय का करार पहले ही निष्पादित हो चुका है, अतः उसे कोई किराया देने की आवश्यकता नहीं है। तदनुसार,



वादी ने उत्तरवादी सं. 2 को किराया देना बंद कर दिया। वादी का यह भी प्रकरण है कि चूँकि उत्तरवादी सं. 1 और 2 विक्रय विलेख को निष्पादित नहीं कर रहे हैं, अतः वादी ने 28.11.2003 को एक नोटिस भेजकर उन्हें वादी से शेष विक्रय प्रतिफल प्राप्त करने के बाद विक्रय विलेख को निष्पादित करने के लिए कहा। उसने उत्तरवादी सं. 3 को भी एक नोटिस भेजकर विक्रय विलेख निष्पादित करने से रोका है चूँकि वादी और उत्तरवादी सं. 2 के मध्य एक करार पहले ही हो चुका है। उत्तरवादी सं. 1, 2 और 3 ने नोटिस का जवाब प्रस्तुत किया है कि वाद संपत्ति में वादी नहीं रह रहा है बल्कि उसकी पुत्री अपने बच्चों के साथ अवैध रूप से रह रही है और यह दावा किया है कि वे किराया नहीं दे रहे हैं। आगे यह दावा किया गया है कि वादी ने मकान के क्रय हेतु दिनांक 23.12.2003 को अपने पुत्र को राजनंदगांव ग्रामीण बैंक में रु. 50,000/- तथा दिनांक 31.12.2003 को स्टेट बैंक दुर्ग में रु. 40,000/- जमा करने का निर्देश दिया है अतः उसके पास विक्रय- विलेख को निष्पादित करने के लिए पर्याप्त धन है जिससे यह साबित किया जा सके कि वह संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद है।

(ग) यह भी तर्क दिया गया है कि वादी द्वारा आपत्ति के बावजूद उत्तरवादी सं. 1 और 2 ने उत्तरवादी सं. 1 के साथ 15.12.2003 पर विक्रय- विलेख को निष्पादित किया। 3 और 4, इस प्रकार विक्रय- विलेख को अमान्य घोषित किया जाए और उत्तरवादी को वादी के शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोका जाए।

4. उत्तरवादी सं. 1 ने अपना लिखित कथन तथा प्रति-दावा प्रस्तुत किया है जिनमें मुख्य रूप से प्रतिवाद किया गया है कि; -

(क) वादी ने उत्तरवादी सं. 1 से वाद संपत्ति रु. 600/- प्रति माह के किराए ली है और शेष दावे सही नहीं हैं और उनसे इनकार किया है। यह भी विशेष रूप से अस्वीकार किया गया है कि उत्तरवादी सं. 1 द्वारा रु.18,200/- प्राप्त किए गए हैं और वे विक्रय विलेख को निष्पादित करने के लिए सहमत हुए थे और यह भी दावा किया कि उत्तरवादी सं. 1 वाद



संपत्ति की विधिक स्वामी है क्योंकि उसने उसे स्वयं की आय से खरीदा है जो उसने भिलाई स्टील प्लांट में सफाईकर्म (स्वीपर) के तौर पर कार्य करते हुए वेतन के रूप में प्राप्त किया था। यह दावा भी किया गया है कि उसने पंजीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से दिनांक 04.02.1980 को रु.5,500/- में वाद संपत्ति का क्रय किया था तथा सेवानिवृत्ति के बाद वह ग्राम चिखलाकला में अपने पैतृक घर चली गई थी। यह भी निवेदन किया गया है कि चूंकि वह वाद मकान से बहुत दूर रह रही है, अतः उसने अपने पुत्र उत्तरवादी सं. 2 के एक मित्र को वाद संपत्ति की देखभाल करने के लिए कहा है। यह भी निवेदन किया गया है कि वादी के साथ अच्छे संबंधों के कारण उत्तरवादी सं. 2 ने केवल अपने घर के सामानों को रखने के लिए 15 दिनों के लिए वाद मकान की चाबी दी है, ऐसे में वादी की पुत्री किराए का भुगतान किए बिना अवैध रूप से रह रही थी। यह भी दावा किया गया है कि उत्तरवादी सं. 1 ने धन की आवश्यकता के कारण उत्तरवादी सं. 3 और 4, जो उत्तरवादी सं. 1 और 2 के करीबी रिश्तेदार हैं, के पक्ष में वाद मकान का विक्रय किया है। उत्तरवादी सं. 1 ने भाड़ा नियंत्रण प्राधिकरण के समक्ष बेदखली के लिए वाद भी प्रस्तुत किया है जो लंबित है और उसने वाद को खारिज करने का अनुरोध किया है। जवाबी दावे में, वादी द्वारा प्रस्तुत वाद झूठा और मनगढ़ंत होने के कारण मौखिक करार को अकृत और शून्य घोषित करने के लिए प्रार्थना की गई है।

5. वादी सं. 3 और 4 ने मुख्य रूप से यह दावा करते हुए लिखित कथन प्रस्तुत किया है कि इस बात से इनकार किया जाता है कि 07.07.2003 दिनांकित किसी भी करार को रु.18,200/- के प्रतिफल के लिए निष्पादित किया गया था और वादी सं. 4 द्वारा कोई नोटिस प्राप्त नहीं किया गया है। यह भी दावा किया गया है कि वादी ने स्वयं उत्तरवादी सं. 3 को वाद मकान क्रय के लिए सहमति दी है, इसके बाद दुर्भावनापूर्ण रीति से उसने नोटिस भेजा है। यह भी दावा किया गया है कि उत्तरवादी सं. 3 और 4 वाद संपत्ति के वास्तविक क्रेता हैं और फिर भी यदि वादी वाद मकान को खरीदना चाहती है तो उसे 5 प्रतिशत प्रति माह की दर से मासिक किराया, रु. 2,00,000/- रजिस्ट्री के दिनांक से



उत्तरवादी सं. 3 और 4 को देना होगा, तब उत्तरवादी सं. 3 और 4 न्यायालय के माध्यम से वादी के पक्ष में विक्रय विलेख को निष्पादित करने के लिए तैयार और रजामंद हैं और उसने वाद को खारिज करने का अनुरोध किया है।

6. उत्तरवादी सं. 3 और 4 ने उत्तरवादी सं. 1 द्वारा लिखित कथन में उल्लिखित तथ्य को दोहराते हुए प्रति-दावा प्रस्तुत किया है और यह भी दावा किया है कि उत्तरवादी सं. 3 और 4 के पक्ष में 16.12.2003 को निष्पादित विक्रय विलेख विधिक है और वे वाद संपत्ति के स्वामी हैं। यह भी दावा किया गया है कि वादी अपने ही मकान में रह रही है और उसने अवैध रूप से वाद मकान पर कब्जा कर लिया है, अतः वादी को बेदखल करना आवश्यक है और तदनुसार यह घोषित करने के लिए प्रार्थना की गई है कि वे वाद संपत्ति के स्वत्व धारक हैं और वाद संपत्ति पर काबिज हैं।

7. पक्षकारों के कथनों पर, विद्वान विचारण न्यायालय ने 11 विवाद्यक विरचित किए हैं। विवाद्यक सं. 1, 2, 5 और 8 सुसंगत हैं, अतः उन्हें नीचे उद्धरित किया जा रहा है:-

1. क्या उत्तरवादी क्र. 1 व 2 द्वारा विवादित मकान को वादिनी के पास रु.1,05,000/- में दिनांक 07.07.20023 को विक्रय करने का सौदा किया था?
2. क्या उपरोक्त सौदा पेटे उत्तरवादी क्र. 1 व 2 की ओर से बतौर अग्रिम रु.18,200/- वादिनी से प्राप्त कर वादिनी के पक्ष में उत्तरवादी क्र. 2 द्वारा लिखकर दिया गया है?
5. क्या उत्तरवादी क्र. 3 व 4 द्वारा वाद संपत्ति का उत्तरवादी क्र. 1 व 2 से निष्पादित विक्रय पत्र दिनांक 11.12.2003 पंजीयन दिनांक 15.12.2003 अवैध एवं शून्य है?
8. क्या उत्तरवादी क्र.-3 व 4 विक्रय पत्र दिनांक 16.12.2003 से रु. 600/- माहवार के हिसाब से किराया एवं कब्जा प्राप्त करने का घोषणा पाने के अधिकारी हैं?
8. अपने प्रकरण को साबित करने के लिए वादी ने स्वयं का (अ.सा.-1) के तौर पर तथा दीपक कुमार बनोटिया (अ.सा.-2) का परीक्षण कराया है तथा दस्तावेज- रसीद (प्र.P-1),



नोटिस (प्र.P-2), जन सूचना (प्र.P-3), पंजीकृत नोटिस (प्र.P-4), रसीद (प्र.P-6), पावती (प्र.P-7), पावती (प्र.P-8), पंजीकृत नोटिस (प्र.P-9), रसीद (प्र.P-10), पावती (प्र.P-11), पंजीकृत सूचना का जवाब (प्र.P-12), लिफाफा (प्र.P-13), नोटिस का जवाब (प्र.P-14), रसीद और पावती (प्र.P-15 से 16), पंजीकृत नोटिस का जवाब, डाक रसीद (प्र.P-17 से 24), विज्ञापन (प्र.P-25), बंध-पत्र के दस्तावेज (प्र.P-26 और प्र.P-27), आवेदन पत्र (प्र.P-28), आदेश 12 नियम 3 सिविल प्रक्रिया संहिता (प्र.P-29) प्रदर्शित किए हैं। उत्तरवादी ने स्वयं का (ब.सा.-1) के तौर पर तथा शशि यादव (ब.सा.-2), श्रीमती रुक्मिणी ठाकुर (ब.सा.-3), लोकेश (ब.सा.-4), भरत सिंह यादव (ब.सा.-5), दुर्गा प्रसाद यादव (ब.सा.-6), चलामा (ब.सा.-7) और संतोष बिनवर का परीक्षण कराया है तथा दस्तावेज- आवेदन की प्रति (प्र.D-1 और 2), ऑर्डर (प्र.D-3), खसरा पंचशाला (प्र.D-4 और 5), ऋण पुस्तिका (प्र.D-6 और 7), विज्ञापन ( प्र.D-8 और 9), डाक प्रमाण पत्र (प्र.D-10 से प्र.D-13), विधिक नोटिस (प्र.D-14), ऋण पुस्तिका (प्र.D-16 और 17), जाति प्रमाणपत्र (प्र.D-18), करारनामा (प्र.D-19), बंध-पत्र के दस्तावेज (प्र.D-20), करार (प्र.D-21), जाति प्रमाणपत्र (प्र.D-22), चालान (प्र.D-23), नोटिस (प्र.D-29 और 30), बैंक संग्यापन (प्र.D-26), 24.07.1980 दिनांकित पत्र (प्र.D-27), रसीद (प्र.D-29 और 30), आवेदन (प्र.D-31 और 32), शपथ-पत्र (प्र.D-33), कर सूचना (प्र.D-34), वित्त आवेदन (प्र.D-35 और 36), करार (प्र.D-37), पेपर कटिंग (प्र.D-38), विक्रय विलेख (प्र.D-39), सहमति पत्र (प्र.D-40), बैंक के समक्ष प्रस्तुत शपथ-पत्र (प्र.D-41) तथा बैंक के समक्ष प्रस्तुत किया गया शपथ- पत्र (प्र.D-42), प्रदर्शित किए।

9. माननीय विचारण न्यायालय ने मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों पर विचार करने के बाद, वादी का वाद खारिज कर दिया और प्रति-दावा स्वीकार कर लिया। न्यायालय ने यह घोषणा की कि उत्तरवादी सं. 3 और 4, कृष्ण मंदिर के पास, ग्राम पचरी पारा, दुर्ग में स्थित, खसरा सं. 1083/8 (क्षेत्रफल 0.005 हेक्टेयर) वाले मकान के मालिक हैं। साथ ही, न्यायालय ने यह भी निर्देश दिया कि निर्णय के दिनांक से दो महीने के भीतर उक्त



मकान का खाली कब्जा उत्तरवादी सं. 3 और 4 को सौंप दिया जाए; यदि खाली कब्जा नहीं सौंपा जाता है, तो वादी उत्तरवादी सं. 3 और 4 को प्रतिदिन रु. 100/- की दर से प्रतिकर देने के लिए उत्तरदायी होगा। विचारण न्यायालय ने यह भी निर्देश दिया कि वादी, उत्तरवादियों को मकान का किराया रु. 600/- प्रति माह का भुगतान करेगा। विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 29.04.2016 को पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, वादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के तहत इस न्यायालय के समक्ष प्रथम अपील प्रस्तुत की है।

10. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष अवैधता और विकृति से ग्रस्त है, अतः वह इस न्यायालय द्वारा अपास्त किए जाने योग्य है। उन्होंने आगे कहा कि विद्वान विचारण न्यायालय ने उत्तरवादी सं. 1 साक्षी श्रीमती गौत्रिन बाई के अभिसाक्ष्य पर विचार नहीं किया है, जिसने अपने अभिसाक्ष्य में स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि अपीलार्थी उसके घर में रह रही है और अपीलार्थी के साथ वाद मकान के विक्रय का संव्यवहार हुआ है। यह भी दावा किया गया है कि उत्तरवादी सं. 1 ने यह भी स्वीकार किया है कि विक्रय विलेख को निष्पादित करने से पहले अपीलार्थी को कोई नोटिस नहीं दिया गया था, जो उत्तरवादी सं. 3 द्वारा उसके अभिसाक्ष्य में समर्थित है, अतः उत्तरवादी सं. 3 और 4 के साथ संव्यवहार अवैध है। यह भी तर्क दिया गया है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अनौपचारिक रीति से, साक्ष्य का विश्लेषण किए बिना विचारण का निर्णय किया है, अतः विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को अपास्त करने का अनुरोध किया।

11. आगे वे निवेदन करते हैं कि विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 9 और 10 के अनुसार अचल संपत्ति के विक्रय के लिए मौखिक करार बहुत अच्छी तरह से लागू किया जा सकता है और यदि यह संविदा निष्कर्षित करता है तो संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का अनुतोष न्यायालयों द्वारा बहुत अच्छी तरह प्रदान किया जा सकता है। आगे वे निवेदन करते हैं कि अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य से यह काफी स्पष्ट है कि वादी और



उत्तरवादी सं. 1 के मध्य एक मौखिक करार अस्तित्व में था, अतः विचारण न्यायालय को उत्तरवादी सं. 1 और 2 को वादी के साथ करार को निष्पादित करने का निर्देश देते हुए वाद में डिक्री प्रदान करनी चाहिए थी। उन्होंने आगे कहा कि विद्वान विचारण न्यायालय को वादी को बेदखल करने का निर्देश तब तक नहीं दिया जाना चाहिए था जब तक कि बेदखल करने की मांग का आधार नहीं बनाया जाता है क्योंकि किरायेदार भाड़ा नियंत्रण अधिनियम, 1961 के तहत संरक्षित है। इस प्रकार, विचारण न्यायालय को उत्तरवादी सं. 3 और 4 के प्रति-दावा को स्वीकार नहीं करना चाहिए था। आगे वे निवेदन करते हैं कि आदेश 2 नियम 2, सिविल प्रक्रिया संहिता में निहित प्रतिबंध को लागू करने से पहले विचारण न्यायालय को वाद कारण, दावा किए गए अनुतोष, अनुतोष प्रदान करने के लिए लागू विधिक उपबंधों और दोनों वादों के पूरे तथ्यात्मक आव्यूह की जांच करनी चाहिए, अतः विचारण न्यायालय को विक्रेता और क्रेता के मध्य अर्थात् उत्तरवादी सं. 1 और वादी के मध्य संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का निर्देश देना चाहिए था और बाद के हस्तांतरणकर्ता को भी हस्तांतरण में सम्मिलित होने का निर्देश देना चाहिए था ताकि वादी को वह स्वत्व प्रदान किया जा सके जो उसमें रहता है। इस प्रकार वह वादी के पक्ष में विक्रय विलेख को निष्पादित करने के लिए उत्तरवादी सं. 3 और 4 को निर्देश जारी करने के लिए प्रार्थना करते हैं। अपने तर्क को बल देने के लिए वे 2015 (5) एस. सी. सी. 223 में प्रतिवेदित रत्नावती व एक अन्य बनाम कविता घनश्यामदास, के. कंजप्पा (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से बनाम व एक अन्य बनाम आर. ए. हमीद उर्फ अमीरसब (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से व एक अन्य 2016 (1) एस. सी. सी. 762 तथा 2018 (8) एस. सी. सी. 311 में प्रतिवेदित अलगु फार्मसी व अन्य बनाम एन. मगुदेश्वरी के प्रकरणों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों को संदर्भित किया है।

12. दूसरी ओर, उत्तरवादियों के विद्वान अधिवक्ता यह निवेदन करते हैं कि अपीलार्थी ने पारित निर्णय और डिक्री को प्रति-दावे में चुनौती नहीं दी है; इसलिए, वर्तमान अपील



विचारणीय नहीं है। साथ ही, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्षों को अंतिम रूप प्राप्त हो चुका है और पूर्व न्याय (रेस ज्यूडिकाटा) का सिद्धांत पूरी शक्ति से लागू होता है। ऐसे में, अपीलकर्ता विचारण न्यायालय द्वारा उस घोषणा के संबंध में दर्ज निष्कर्षों पर प्रश्न नहीं उठा सकता हैं जिनमें यह कहा गया है कि उत्तरवादी सं. 3 और 4 ही वाद संपत्ति के स्वत्व धारक हैं। वे आगे यह भी तर्क करते हैं कि विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज यह निष्कर्ष कि वादी और उत्तरवादी सं. 1 के मध्य कोई समझौता निष्पादित नहीं हुआ था, किसी भी प्रकार की विकृति या अवैधता से ग्रस्त नहीं है; और विद्वान विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 1 और 3 का निर्णय उत्तरवादी सं. 3 और 4 के पक्ष में बिल्कुल सही किया है। वे आगे यह भी निवेदन करते हैं कि विद्वान विचारण न्यायालय का यह निष्कर्ष कि उत्तरवादी सं. 1 और उत्तरवादी सं. 4 के मध्य 11.12.2003 को निष्पादित विक्रय-पत्र वैध और न्यायसंगत है, बिल्कुल सही है; और वह अपील को खारिज करने की प्रार्थना करते हैं। अपने प्रकरण को बल देने के लिए, वे **ए.आई.आर. 2017 पटना 187** में प्रतिवेदित **किशोरी देवी बनाम रामेश्वर प्रसाद** के प्रकरण में पटना उच्च न्यायालय के निर्णय को संदर्भित किया है।

13. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है और नीचले न्यायालय के अभिलेख का सावधानी से परिशीलन किया है।

14. पक्षकारों के उपरोक्त कथनों से, इस न्यायालय द्वारा निर्धारण के लिए जो बिंदु सामने आई है, वह इस प्रकार है:-

(I) क्या विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष विधिक, न्यायोचित है, और इस न्यायालय के हस्तक्षेप को आमंत्रित करने वाली विकृति या अवैधता से ग्रस्त नहीं है?

(II) क्या प्रति-दावे में प्रतिवादियों को अनुतोष प्रदान करने वाली डिक्री के विरुद्ध पृथक रूप से अपील की जा सकती है अथवा क्या



वादी द्वारा विचारण न्यायालय के उस निर्णय और डिक्री के विरुद्ध एक संयुक्त अपील संधारणीय है, जिसमें वाद को तो खारिज कर दिया गया हो, किंतु प्रति-दावे में डिक्री प्रदान कर दी गई हो?

(III) क्या प्रति-दावे में पारित डिक्री के विरुद्ध अपील प्रस्तुत न करना विधि और प्रक्रिया के अनुसार है तथा केवल निर्णय और वाद को खारिज करने वाली डिक्री के विरुद्ध प्रस्तुत अपील में पूर्व न्याय (रेस ज्यूडिकाटा) के रोक को आकर्षित करेगा?

### बिन्दु सं. 1 पर विवेचन और निष्कर्ष

15. बिन्दु सं. 1 की जाँच करने के लिए इस न्यायालय के लिए अभिलेख पर लाए गए साक्षियों के साक्ष्य का परीक्षण करना समीचीन है। वादी अंजना बनोटिया (अ.सा.-1) ने अपने मुख्य परीक्षण में वादपत्र में अपने द्वारा किए गए कथन को दोहराया है और प्रतिपरीक्षण में, उसने स्वीकार किया है कि (प्र.P-1) जिस रसीद पर कथित रूप से देव नारायण गोंड द्वारा हस्ताक्षर किए गए हैं, उसमें गौत्रिन बाई के हस्ताक्षर नहीं हैं और स्वतंत्र साक्षी के कोई हस्ताक्षर नहीं हैं। उसने यह भी स्वीकार किया है कि रसीद में वाद संपत्ति का कोई विवरण नहीं था और वाद मकान गौत्रिन बाई के नाम पर था और उसे यह जानकारी है। उसने यह भी स्वीकार किया है कि वाद मकान के बगल में उसका घर भी है। उसने यह भी स्वीकार किया है कि प्र.P-1 में कोई उल्लेख नहीं था कि दिवाली के बाद विक्रय-विलेख निष्पादित किया जाएगा। उसने यह भी स्वीकार किया है कि 01.12.2006 को वाद मकान का मूल्य रु. 3,00,000/- है। उसने यह भी स्वीकार किया है कि गौत्रिन बाई ने अपनी आय से संपत्ति खरीदी है। उसने यह भी स्वीकार किया है कि विक्रय- विलेख के बाद प्र.P-1 में यह उल्लेख नहीं किया गया है कि कोई किराया देय नहीं है। उसने यह भी कहा है कि जब उस समय प्र.P-1 का प्रलेखन किया गया था, तब अग्रिम राशि देने के बाद घर में रु.1,10,000/- हुआ था परन्तु उसने उसे जमा नहीं



किया है। दीपक कुमार बनोटिया (अ.सा.-2), जिसका वादी के समर्थन में परीक्षण किया गया है, ने अपने प्रतिपरीक्षण में स्वीकार किया है कि उसने रजिस्ट्री के समक्ष आपत्ति जताई है, परन्तु उन्हें कोई स्थगन प्रदान नहीं किया।

16. गौत्रिन बाई (ब.सा.-1) ने अपनी मुख्य परीक्षण अपने लिखित कथन में अपने द्वारा किए गए कथन को दोहराया है और प्रतिपरीक्षण में उसने स्वीकार किया है कि शशि यादव ने उसे राशि का भुगतान करने के बाद उसके पक्ष में विक्रय- विलेख निष्पादित करने के लिए कहा है। उसने इस बात से भी इनकार किया है कि वादी विक्रय- विलेख को निष्पादित करने के लिए तैयार थी क्योंकि उसके पास धन की उपलब्धता है। (ब.सा.-2) शशि यादव ने लिखित में उसके द्वारा किए गए कथन को दोहराया है। उसने स्वीकार किया है कि वादी और स्वर्गीय गौत्रिन बाई के मध्य कोई करार नहीं हुआ था, इसलिए वादी को नोटिस देने की कोई आवश्यकता नहीं है।

17. भरत सिंह यादव (ब.सा.-5) ने अपने मुख्य परीक्षण में अपने लिखित कथन में कही गई बातों को दोहराया है, और प्रतिपरीक्षण के दौरान उसने कहा है कि गौत्रिन बाई और देव नारायण ने उन्हें सूचित किया था कि उन्होंने वाद संपत्ति की बिक्री का करार वादी के साथ कर लिया है। इसके बावजूद उन्होंने वह मकान खरीद लिया है। दुर्गराम यादव (ब.सा.-6) ने अपने मुख्य परीक्षण में कहा है कि देव नारायण गोंड उसका "महाप्रसादी मितान" था। उन्होंने कथन किया कि गौत्रिन बाई ने मकान के रोजमर्रा के रखरखाव के लिए उसे चाबी दी थी, और अंजना बनोटिया ने उनसे अनुरोध किया था कि वह 15 दिनों के लिए मकान की चाबी उसे दे दे ताकि वह अपनी बेटी का सामान मकान में रख सकें। चूंकि वे सभी एक ही इलाके में रहते थे, इसलिए उसने गौत्रिन बाई से अनुमति लिए बिना ही अंजना बनोटिया को अपना सामान रखने के लिए मकान दे दिया; यह आपसी समझ थी कि 15 दिनों के भीतर मकान खाली करके वापस सौंप दिया जाएगा, लेकिन उन्होंने मकान का कब्जा वापस नहीं दिया है। उसने यह भी कहा कि वाद मकान की बिक्री के संबंध में गौत्रिन बाई और स्वर्गीय देव नारायण के बीच कोई दस्तावेजी कार्रवाई



नहीं हुई थी; इसलिए, न तो वादी और न ही उसकी बेटी इस मकान की किराएदार हैं और न ही खरीदार। गौत्रिन बाई ने अपने जीवनकाल में ही, दिनांक 11.12.2003 को, यह मकान प्रतिवादी सं. 3 और 4 को बेच दिया था। साक्षी का प्रतिपरीक्षण किया गया और प्रतिपरीक्षण के दौरान उसने स्वीकार किया कि शपथ-पत्र में जो कुछ भी लिखा है, वह सब सुनी-सुनाई बातें हैं। उसने यह भी माना कि अंजना और दीपक, दोनों ही शासकीय सेवा में हैं, और दीपक एक सब-इंजीनियर हैं।

18. देव नारायण गोंड के पुत्र लोकेश ठाकुर (ब.सा.-4) ने मुख्य परीक्षण में प्रतिवादियों के प्रकरण का समर्थन किया है और प्रतिपरीक्षण में उसने स्वीकार किया है कि उसकी दादी ने वर्ष 1993 में वेतन से अपनी आय से वाद मकान खरीदा था और इस बात से इनकार किया है कि उसकी दादी और पिता ने वाद मकान के विक्रय के लिए अंजना बाई के साथ एक करार किया है।

19. अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य से और विशेष रूप से प्र.P-1 से जो कथित रूप से धन की प्राप्ति है और विक्रय के लिए करार नहीं है, यहां तक कि वादी भी विचारण न्यायालय के समक्ष यह स्थापित करने में असमर्थ है कि वादी और उत्तरवादी सं.1 के मध्य वाद मकान के विक्रय के लिए कोई करार किया गया था। विद्वान विचारण न्यायालय ने साक्ष्य के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि रसीद में केवल विक्रय के करार का उल्लेख किया गया है और साथ ही गौत्रिन बाई का कोई हस्ताक्षर नहीं था। परन्तु रसीद पर कथित तौर पर देव नारायण गोंड के हस्ताक्षर थे, जो वाद मकान का स्वामी नहीं था, इसलिए यह नहीं माना जा सकता है कि उनके मध्य एक करार निष्पादित हुआ था। विद्वान विचारण न्यायालय ने अपना निष्कर्ष भी दर्ज किया गया है कि वादी यह साबित करने में सक्षम नहीं है कि देव नारायण गोंड गौत्रिन बाई की ओर से रसीद देने के लिए अधिकृत थे। तदनुसार, विचारण न्यायालय द्वारा बनाए गए विवाद्यक सं. 1 का वादी के विरुद्ध जवाब दिया गया है।



20. इसी प्रकार, विद्वान विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 2 का निर्णय करते हुए अपना निष्कर्ष दर्ज है कि देव नारायण के हस्ताक्षर वादी द्वारा साबित नहीं किए गए थे क्योंकि इस तथ्य को साबित करने का भार वादी पर है जो केवल वादी की जानकारी में है। विद्वान विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का विश्लेषण करने के बाद अपना निष्कर्ष दर्ज किया है कि वादी यह स्थापित करने में असमर्थ है कि वादी और उत्तरवादी सं. 1 और 2 के मध्य एक करार निष्पादित किया गया था और वे संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद थे जो किसी विकृति या अवैधता से ग्रस्त नहीं है जो इस न्यायालय के हस्तक्षेप को आमंत्रित करता हो। संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के प्रकरण में विधि की सुस्थापित विधिक स्थिति को देखते हुए, संविदा के विशिष्ट पालन के प्रकरण में न केवल कथन करना होगा है बल्कि यह साबित भी करना होगा कि वादी संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद है, जिसे वादी साबित करने में बुरी तरह विफल रहा है। वादी यह साबित करने में सक्षम नहीं है कि उसके पास उत्तरवादी सं. 1 को संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए कहकर उसकी तैयारी और रजामंदी स्थापित करने की वित्तीय क्षमता है। वर्तमान प्रकरण में, संविदा के विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री प्राप्त करने के लिए दोनों आवश्यक तत्व गायब हैं। 2024 आई. एन. एस. सी. 927 में प्रतिवेदित आर. शमा नाइक बनाम जी. श्रीनिवास के प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के आवश्यक घटकों का परीक्षण करते हुए कण्डिका 8, 9, 10, 11 और 13 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:-

8. विशिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 16 (ग) (01.10.2018 के प्रभाव से संसोधन से पूर्व) उस व्यक्ति के पक्ष में संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष को रोकती है जो संविदा के अपने भाग का पालन करने की तैयारी और रजामंदी को दर्शाने में



विफल रहता है।

9. तैयारी और रजामंदी के विषय पर कई मिसालें हैं।

10. विधि सुस्थापित है। वादी न केवल वाद में विशिष्ट और कथन करने के लिए बाध्य है बल्कि समय पर संविदा के संदर्भ में भुगतान करने के लिए धन की उपलब्धता दिखाने के लिए आवश्यक मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए भी बाध्य है।

12. जबकि तैयारी का अर्थ है वादी की संविदा करने की क्षमता जिसमें उसकी वित्तीय स्थिति शामिल होगी, इच्छा वादी के आचरण से संबंधित है।

13. प्रथम अपील में उच्च न्यायालय अभिलेख पर प्रस्तुत मौखिक और दस्तावेजी- दोनों साक्ष्यों का मूल्यांकन कर इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि वादी यह स्थापित करने में विफल रहा है कि वह सदैव संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद था।

21. यहां तक कि वादी भी साक्षियों का परीक्षण कर यह साबित करने में असमर्थ है कि मौखिक करार किया गया था क्योंकि उत्तरवादी सं. 1 ने करार के निष्पादन के तथ्य से विशेष रूप से इनकार किया है। मौखिक करार का यह तथ्य केवल वादी के ज्ञान में था, ऐसे में इसे साबित करने का भार केवल उस पर है जिसे उसने अपने भार का निर्वहन कर साबित नहीं किया है। इस प्रकार, यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि एक मौखिक करार था। 2025 आई. एन. एस. सी. 1038 में प्रतिवेदित चौदम्मा (मृत) विधिक प्रतिनिधियों द्वारा व एक अन्य बनाम वेंकटप्पा विधिक प्रतिनिधियों द्वारा व एक अन्य की कण्डिका 41 से 46 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम के अंतर्गत सबूत के भार के सिद्धांत का परीक्षण किया है तथा निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:



“41. यह एक सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि सबूत का भार उस पक्ष पर होता है जो एक तथ्य का दावा करता है। वर्तमान प्रकरण में, वादी ने सकारात्मक रूप से कहा है कि मृतक दसाबोवी का उनकी माता के साथ वैध वैवाहिक संबंध था। इस दावे का समर्थन अ.सा. 2 (हनुमंतप्पा) का मौखिक साक्ष्य, वादी के निवास पर नियमित रूप से जाने में मृतक दसाबोवी के निरंतर आचरण और उत्तरवादी सं. 1 से किसी भी विपरीत सामग्री के अभाव से किया जाता है।

42. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का मत है कि वादी ने उन पर रखे गए सबूत के भार का निर्वहन कर दिया है। उन्होंने पर्याप्त रूप से स्थापित किया है कि मृतक दसाबोवी उनकी माता भीमवका @ सत्यवका के साथ पति-पत्नी के रूप में रहते थे।

#### **सबूत का भार और सबूत का दायित्व**

43. अनिल ऋषि बनाम गुरबख्श सिंह के प्रकरण में इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की:

“19. इस मामले का एक अन्य पहलू है जिसे ध्यान में रखा जाना चाहिए। सबूत के भार और सबूत के दायित्व के मध्य एक विभेद मौजूद है। शुरू करने का अधिकार ‘ओनस प्रोबेंडी’ (सबूत का भार वादी या अभियोक्ता पर होता है) का अनुसरण करता है। यह एक प्रकरण के शुरुआती स्तर में महत्वपूर्ण बन जाता है। सबूत के दायित्व के प्रश्न में अधिक ताकत होती है, कहाँ प्रश्न यह होता है कि, किस पक्ष को शुरू करना है। सबूत के भार का उपयोग तीन तरीकों से किया जाता है: (i) प्रारंभ में या बाद में किसी प्रस्ताव के



समर्थन में साक्ष्य लाने के कर्तव्य को इंगित करना; (ii) सभी प्रति-साक्ष्य के विरुद्ध एक प्रस्ताव स्थापित करना; और (iii) एक अंधाधुंध उपयोग जिसमें इसका अर्थ अन्य में से एक या दोनों हो सकता है। धारा 101 में प्राथमिक नियम अपरिवर्तनीय है। धारा 102 के संदर्भ में प्रारंभिक दायित्व सदैव वादी का होता है और यदि वह उस जिम्मेदारी का निर्वहन करता है और एक ऐसा प्रकरण बनाता है जो उसे अनुतोष का हकदार बनाता है, तो उन परिस्थितियों, यदि कोई हों तो, को साबित करने की जिम्मेदारी उत्तरवादी पर स्थानांतरित हो जाती है जो वादी को उसी के लिए अयोग्य ठहराएगी।"

44. इसके अलावा, अड्डगडा राघवम्मा व एक अन्य बनाम अड्डागाडा चैनचम्मा व एक अन्य के प्रकरण में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:

"12. ... सबूत के भार और सबूत के दायित्व के मध्य एक आवश्यक विभेद है: सबूत का भार उस व्यक्ति पर होता है जिसे किसी तथ्य को साबित करना होता है और वह कभी नहीं बदलता है, परन्तु सबूत का दायित्व बदल जाता है। ...इस तरह के विचार, किसी विशेष प्रकरण की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, सबूत की जिम्मेदारी को बदल सकते हैं। साक्ष्य के मूल्यांकन में इस तरह के दायित्व का स्थानांतरण एक निरंतर प्रक्रिया है।

45. जैसा कि यह देखा गया है कि वादी ने विवाह के तथ्य के संबंध में सबूत के अपने भार का सफलतापूर्वक निर्वहन किया है, अब इसका खंडन करने का दायित्व प्रतिवादियों पर आ गया है।



46. प्रतिवादियों ने, मृतक दसाबोवी और वादी की माता के मध्य विवाह से इनकार करने के अलावा, उक्त विवाह की विधिक मान्यता को चुनौती देने के लिए कोई मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है। यह तर्क कि वादी की माता मृतक दसाबोवी के समान जाति से संबंधित नहीं थी, पूरी तरह से किसी भी सबूत या सामग्री से रहित है। उसी के अभाव में, उक्त दावा केवल अटकलों में गिर जाता है।"

### बिंदु सं. 2 और 3 पर विवेचन और निष्कर्ष

22. चूँकि दोनों बिंदु आपस में जुड़े हुए हैं, अतः उन्हें सामान्य निष्कर्षों द्वारा सुना और निराकृत किया जा रहा है।

23. जहाँ तक वादी द्वारा जवाबी दावे में पारित निर्णय और डिक्री को चुनौती न देने के प्रभाव का संबंध है, इस न्यायालय के लिए आदेश 8 नियम 6-क, सिविल प्रक्रिया संहिता के उपबंधों पर विचार समीचीन है, जो निम्नानुसार है:

#### **“आदेश 8 नियम 6-क उत्तरवादी द्वारा जवाबी दावा:**

(1) वाद में प्रतिवादी नियम 6 के अधीन मुजरा के अभिवचन के अपने अधिकार के अतिरिक्त वादी के दावे के विरुद्ध प्रति-दावे के रूप में किसी ऐसे अधिकार या दावे को, जो वादी के विरुद्ध प्रतिवादी को, वाद फाइल किए जाने के पूर्व या पश्चात् किन्तु प्रतिवादी द्वारा अपनी प्रतिरक्षा परिदत्त किए जाने से पूर्व या पश्चात् किन्तु प्रतिवादी को, वाद फाइल किए जाने के पूर्व या अपनी प्रतिरक्षा परिदत्त किए जाने के पूर्व, किसी वाद-हेतुक के बारे में प्रोद्भूत हुआ हो, उठा सकेगा चाहे ऐसा प्रति-दावा नुकसानी के दावे के रूप में हो या न हो :



परन्तु जंहा ऐसा प्रति-दावा न्यायालय की क्षेत्राधिकार की आर्थिक सीमाओं से अधिक नहीं होगा।

(2) ऐसे प्रति-दावे का प्रभाव प्रतिवाद के प्रभाव के समान ही होगा जिससे न्यायालय एक ही वाद में मूल दावे और प्रति-दावे दोनों के संबंध में अंतिम निर्णय सुनाने के लिए समर्थ हो जाए।

(3) वादी को इस बात की स्वतंत्रता होगी कि वह प्रतिवादी के उत्तर में लिखित कथन ऐसी अवधि के भीतर जो न्यायालय द्वारा नियत की जाए, फाइल करे।

(4) प्रति-दावे को एक वादपत्र के रूप में माना जाएगा और उसे वही नियम लागू होंगे जो वादपत्रों को लागू होते हैं।"

24. ऊपर उद्धृत 'दंड प्रक्रिया संहिता' के आदेश 8 नियम 6-क के वाचन से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि यह किसी वाद में प्रतिवादी को, अपनी दलील पेश करने के अधिकार के अलावा, नियम 6 के तहत मुजरा का दावा करने का अधिकार देता है। इसके तहत प्रतिवादी, वादी के दावे के विरुद्ध प्रति-दावा के रूप में, किसी भी ऐसे अधिकार या दावे को पेश कर सकता है जो उसे वादी के खिलाफ किसी वाद-कारण के संबंध में प्राप्त हुआ हो, चाहे वह अधिकार या दावा मुकदमा दायर होने से पहले मिला हो या बाद में, लेकिन शर्त यह है कि प्रतिवादी ने अभी तक अपना प्रतिरक्षा परिदत्त न किया हो, या उसके प्रतिरक्षा परिदत्त करने के लिए निर्धारित समय सीमा समाप्त न हुई हो; और यह बात मायने नहीं रखती कि ऐसा प्रति-दावा नुकसानी के दावे की प्रकृति का है या नहीं। इसमें आगे कहा गया है कि जब इस तरह का प्रति-दावा प्रस्तुत किया जाता है, तो इसका प्रभाव प्रति-वाद के समान होगा ताकि न्यायालय मूल दावे और प्रति-दावे दोनों पर एक ही वाद में अंतिम निर्णय देने में समर्थ हो सके। उपनियम (3) में कहा गया है कि यदि ऐसा प्रतिवाद किया जाता है, तो वादी को उसी के उत्तर में लिखित कथन दायर करने की



स्वतंत्रता होगी। जहाँ तक प्रति-दावे का संबंध है, नियम 4 कहता है कि 'प्रति-दावे को एक वादपत्र के रूप में माना जाएगा और वादपत्र वादियों पर लागू नियमों द्वारा शासित किया जाएगा' - सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 8, नियम 6-ग, कुछ विशेष परिस्थितियों में वादी को न्यायालय से यह आदेश प्राप्त करने का अधिकार देता है कि प्रति-दावे को मूल वाद-पत्र के साथ न जोड़ा जाए, बल्कि उसे एक पृथक वाद के रूप में ही माना जाए। न्यायालय, इस तरह के आवेदन की सुनवाई करने पर, आदेश 8, नियम 6-घ, सिविल प्रक्रिया संहिता में कहा गया है कि ऐसे मामलों में जहां उत्तरवादी एक प्रति-दावा करता है, भले ही वादी के वाद पर रोक लगा दी गई हो, बंद कर दिया गया हो या खारिज कर दिया गया हो, फिर भी प्रति-दावा आदेश 8, नियम 6-ड., सिविल प्रक्रिया संहिता के साथ आगे बढ़ाया जा सकता है जो आदेश 8, नियम 10, सिविल प्रक्रिया संहिता के अनुरूप है। यह कहता है कि यदि वादी जवाबी दावे का जवाब दाखिल करने में विफल रहता है, तो न्यायालय जवाबी दावे पर निर्णय सुना सकती है। नियम 6-छ कहता है कि वादी द्वारा प्रस्तुत कर किए जाने वाले के संबंध में, आदेश 8, सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधान लागू होंगे।

25. 1996 (4) एस. सी. सी. 699 में प्रतिवेदित श्री जग मोहन चावला बनाम डेरा राधा स्वामी सतसंग जे. टी. के प्रकरण के आलोक में प्रति-दावे के संबंध में विधिक स्थिति अब सुस्थापित है, जिसमें माननीय न्यायमूर्तियों ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया जाता है:

--	--	--

“5. ....प्रति-दावे को एक प्रति-दावे के रूप में माना जा सकता है और इसे पक्षों को एक नए वाद में भेजे बिना उसी वाद में तय किया जा सकता है। यह सच है कि धन के वादों में, डिक्री आ ज्ञप्ति 20, नियम 18, सिविल प्रक्रिया संहिता के अनुरूप होनी चाहिए, परन्तु नियम 6-ए से 6-जी द्वारा पेश किए गए संशोधनों का उद्देश्य



उत्तरवादी को उस दावे से स्वतंत्र एक प्रति-दावा स्थापित करने का वैधानिक अधिकार प्रदान करना है, जिसके आधार पर वादी ने अपनी वाद कारण कारण वाद दायर किया था। नियम 6-ए के उप-नियम (1) में, भाषा को व्यापक शब्दों के साथ इस तरह से जोड़ा गया है ताकि पक्षकार किसी भी दावे के संबंध वाद कारण का अपना स्वतंत्र कारण ला सकें जो एक स्वतंत्र वाद का विषय होगा। इस प्रकार, यह अब धन के दावे या वादी की मूल वाद कारण समान प्रकृति की वाद कारण कारण तक सीमित नहीं है। इसे वादी द्वारा की गई कार्रवाई या मामले के मूल वाद कारण या संबंधित होने की आवश्यकता नहीं है। शब्द "20 के कारण के संबंध में कोई अधिकार या दावा"

उत्तरवादी के साथ उपार्जित कार्रवाई से पता चलेगा कि कार्रवाई का कारण जिससे प्रति-दावा उत्पन्न होता है, जरूरी नहीं कि वादी की वाद कारण कारण से उत्पन्न हो या उसका कोई संबंध हो जो वाद दायर करने के लिए अवसरित था। एकमात्र परिसीमा यह है कि लिखित विवरण दाखिल करने के लिए निर्धारित समय समाप्त होने से पहले वाद कारण उत्पन्न होना चाहिए। उत्तरवादी वाद कारण निर्धारित कर सकता है जो वाद की स्थापना के बाद भी उसे प्राप्त हुआ है। प्रतिवादपत्र को स्पष्ट रूप से वादपत्र के सभी संकेतों के साथ एक प्रतिवादपत्र के रूप में माना जाता है, जिसमें उसकी वाद कारण कारण को टालने का कर्तव्य और उस पर आवश्यक न्यायालय-शुल्क का भुगतान भी शामिल है। कार्यवाही की बहुलता और अनावश्यक संरक्षण से बचने के लिए उत्तरवादी को एक स्वतंत्र विचारण में धकेलने के बजाय, विधायिका का इरादा विचारण और प्रति-दावे दोनों को विचारण और प्रति-विचारण के रूप में एक ही विचारण में चलाने और उन्हें एक ही विचारण में निपटाने का था। दूसरे शब्दों में, एक उत्तरवादी किसी भी वाद कारण कारण के संबंध में जवाबी दावे के माध्यम से किसी भी अधिकार का दावा कर सकता है जो उसे प्राप्त हुआ है, यद्यपि वह वादी द्वारा की गई वाद कारण कारण से स्वतंत्र है और उत्तरवादी को एक अलग वाद दायर



करने के लिए प्रेरित किए बिना वाद कारण समान कारण का न्यायनिर्णयन करता है।"

26. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 2022 (17) एस. सी. सी. 154 में रिपोर्ट किए गए प्रकरण में

सत्येंद्र और अन्य बनाम सरोज और अन्य के प्रकरण पर विचार किया गया है

आदेश 8 नियम 6 (ए) सी. सिविल प्रक्रिया संहिता के उपबंधों को निम्नानुसार

अभिनिर्धारित अभिनिर्धारित किया जाता है गया है: 27. "23. एक प्रति-दावा केवल

"वादी के दावे के खिलाफ" स्थापित किया जा सकता है। चूंकि किला सं. 6// 8 और

23 के संबंध में वादी का कोई दावा नहीं था, इसलिए उत्तरवादियों को सी. सिविल

प्रक्रिया संहिता के आदेश VIII, नियम 6 ए को देखते हुए इन किला सं. पर कोई प्रति-

दावा करने से रोक दिया गया था क्योंकि इसका वादी से कोई लेना-देना नहीं है। यह

सच है कि उत्तरवादी द्वारा प्रति-दावा किया जा सकता है, यहां तक कि वाद कारण

एक अलग या स्वतंत्र कारण पर भी (जग मोहन चावला और अन्न बनाम डेरा राधा

स्वामी सतसंग और Ors. 6)।

24. विधायिका वादबाजी की बहुलता से बचने के लिए जवाबी दावे की स्थापना की

अनुमति देती है। परन्तु पारित किया गया पारित किया गया फपारित किया गया

अधिक स्पष्ट रूप से, इस तरह का प्रति-दावा विवाद के विरुद्ध होना चाहिए। जाहिर है,

वर्तमान प्रकरण में प्रति-दावा वादी के विरुद्ध नहीं था। इसके अलावा, जैसा कि वादी

के पास 21 थे

संपत्ति पर किसी भी अधिभाग र भाग वादपत्र नहीं किया गया है और किला सं.

6// 8 और 23 वादी द्वारा वाद में उल्लिखित वाद संपत्ति भाग हिस्सा भी नहीं हैं।



इसके बावजूद, वादी के विरुद्ध इस तरह के दावे की अनुमति दी गई है। वस्तुतः हमें काउंटर दावे के विरुद्ध वादी द्वारा प्रस्तुत कोई जवाब अभिलेख पर नहीं मिलता है। निष्पक्ष होने के लिए, इस तरह के जवाबी दावे को सी. सिविल प्रक्रिया संहिता के नियम 6 सी के आठवें अनुच्छेद के संदर्भ में बाहर रखा जाना चाहिए था। यहाँ यह कहने के लिए पर्याप्त है कि उत्तरवादियों द्वारा स्थापित जवाबी दावे (1996) 4 एस. सी. सी. 699 को उच्च न्यायालय द्वारा सही ढंग से खारिज कर दिया गया है।"

28. 1991 एम.पी.एल.जे. 102 में प्रतिवेदित शिवकली बाई बनाम मीरा देवी के प्रकरण में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

"33. प्रति-दावा प्रति-वाद की प्रकृति का होने के कारण, वादी के वाद को खारिज करने से प्रभावित नहीं होता है। प्रति-दावे का निपटारा गुण-दोष के आधार पर किया जाना चाहिए। 1976 के संसोधन के बाद, लंबित वाद नए उपबंधों द्वारा शासित होते हैं। यद्यपि उत्तर दावा लिखित में किया गया था, वादी ने संहिता के आदेश 8 के नियम 6-क (3) के तहत प्रदान किए गए उत्तरवादी के प्रति-दावे के उत्तर में अतिरिक्त लिखित दायर करने की अनुमति नहीं मांगी और न ही वादी ने न्यायालय में इस आदेश के लिए आवेदन किया कि इस तरह के प्रति-दावे को बाहर रखा जा सकता है, जैसा कि नियम 6-ग में उपबंधित है। दूसरे शब्दों में, वादी ने अपने दावे को इस अर्थ में बंद कर दिया कि उसने प्रति-दावे के लिए कोई विवाद्यक नहीं उठाया। अतः उत्तरवादी सं. 3 संहिता के आदेश 8 के नियम 6-ड. के तहत उपबंधित अपने दावे की डिक्री का हकदार है। दागा फिल्मस बनाम लोटस प्रोडक्शन व अन्य, ए. आई. आर. 1977 कैल. 312 और भीम सैन बनाम लक्ष्मी नारायण, ए. आई. आर. 1982 पी. एण्ड एच. 155





देखें। पूर्वगामी विवेचन को ध्यान में रखते हुए, उत्तरवादी सं. 3 वाद भूमियों में अपने अधिकार की पूर्व-मुक्ति के लिए एक डिक्री पाने का हकदार है।"

29. उपरोक्त निर्णयों से प्रति-दावे के संबंध में निम्नलिखित सिद्धांत सामने आए:

(क) प्रति-दावा वास्तव में एक वाद है, यद्यपि इसे लिखित कथन में लिया जाता है। जिस तरह वादी द्वारा वाद प्रस्तुत किया जाता है, उसी तरह उत्तरवादी वादी के विरुद्ध वाद कारण के कारण अनुतोष चाहता है जो उसके पास वादी के विरुद्ध है। यह वाद कारण एक स्वतंत्र कारण होता है जिसे एक अलग वाद में भी उठाया जा सकता है। यह कार्यवाही की बहुलता से बचने के लिए है, उत्तरवादी को प्रति-दावा दायर करने और निर्णय लेने की स्वतंत्रता दी जाती है। मूल दावे के साथ-साथ प्रति-दावे दोनों में विवाद्यक का सुझाव दिया जाता है, और दोनों का निपटारा एक सामान्य निर्णय से किया जाता है। आदेश 8, नियम 6-क (2), सिविल प्रक्रिया संहिता कहता है कि मूल दावे और प्रति-दावे दोनों पर एक ही वाद में अंतिम निर्णय हो सकता है। आम बोलचाल में, 'सामान्य निर्णय' का अर्थ है, 'एक से अधिक वादों में एक साथ पहुँचा निर्णय'। आदेश 8, नियम 6-क, सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, एक वाद में कई रूपों में प्रति-दावा या समझौता किया जा सकता है। परन्तु उन्हें अलग-अलग संख्या देने की आवश्यकता नहीं है।





(ख) प्रति-दावे को साक्ष्य पर एक हथियार भी कहा जाता है और उत्तरवादी को वादी के विरुद्ध दावे को एक स्वतंत्र कार्रवाई के रूप में प्रभावी ढंग से लागू करने में सक्षम बनाता है। जैसा कि पहले कहा गया है, यह एक सक्षम उपबंध है जो उत्तरवादी को यह अधिकार देता है कि वह एक स्वतंत्र कार्रवाई प्रस्तुत करने के बजाय, वादी द्वारा उसके विरुद्ध प्रस्तुत वाद में उस अनुतोष की मांग कर सकता है।

30. विचारण न्यायालय के अभिलेखों से, यह बहुत स्पष्ट है कि वादी ने उत्तरवादी सं. 3 और 4 को विक्रय विलेख के बल पर वाद संपत्ति का स्वामित्व धारक घोषित करते हुए प्रतिवाद में पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध कोई अपील प्रस्तुत कर नहीं की है और चूंकि प्रतिवाद को एक वाद माना जाता है, यद्यपि इसका निपटारा एक सामान्य निर्णय द्वारा किया जाता है, और यदि किसी निर्णय के विरुद्ध अपील नहीं की जाती है, तो पूर्व-न्याय का सिद्धांत सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 के स्पष्टीकरण 1 से स्पष्ट रूप से लागू किया जाता है, जिसमें यह प्रावधान है कि यदि किसी वाद में दिया गया निर्णय अंतिम हो चुका है, जिसमें अपील में तय किए जाने वाले विवाद्यक पर सुनवाई हुई थी और उसे अंतिम रूप से तय कर दिया गया था, तो उससे जुड़े दूसरे वाद के विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती क्योंकि पूर्व न्याय (रेस ज्यूडिकाटा) के सिद्धांत के तहत ऐसी अपील वर्जित है। 1993 (2) एस. सी. सी. (सप.) 146 में प्रतिवेदित प्रीमियर टायर्स लिमिटेड बनाम केरल राज्य सड़क परिवहन निगम के प्रकरण में यह विवाद्यक सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ प्रकट हुआ था, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कण्डिका 4 और 6 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

“4. यद्यपि इनमें से कोई भी निर्णय उस स्थिति से संबंधित नहीं था जहां संबंधित वाद में निर्णय के विरुद्ध कोई अपील प्रस्तुत नहीं की गई थी, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि जहां संबंधित वाद से उत्पन्न



होने वाली अपील को गुण-दोष के आधार पर खारिज कर दिया जाता है, तो दूसरे पर सुनवाई नहीं की जा सकती है और इसे खारिज करना पड़ता है। प्रश्न यह है कि क्या होता है जहां कोई अपील प्रस्तुत नहीं की जाती है, जैसा कि इस प्रकरण में संबंधित वाद में आ ज्ञाप्ति से होता है। किसी निर्णय या डिक्री के विरुद्ध अपील दायर न करने का प्रभाव यह है कि यह अंतिम हो जाता है। इस अंतिमता को केवल विधि के अनुसार ही हटाया जा सकता है। समान परिणाम तब होते हैं जब किसी संबंधित वाद में किसी निर्णय या डिक्री के विरुद्ध अपील नहीं की जाती है।

6. इस प्रकार, संबंधित वाद में अभिलिखित निष्कर्ष की अंतिमता, अपील दायर न किए जाने के कारण, न्यायालय को अन्य वाद में अपील के साथ आगे बढ़ने से रोकती है। मामले के किसी भी दृष्टिकोण से उच्च न्यायालय का आदेश हस्तक्षेप किए जाने योग्य नहीं है।"

31. विधि की उपरोक्त स्थिति और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वादी ने उस निर्णय और डिक्री के विरुद्ध कोई अपील दायर नहीं की है, जिसमें प्रतिवादी सं. 3 और 4 के प्रति-दावे को स्वीकार करते हुए, उन्हें वाद-सम्पत्ति का हकदार घोषित किया गया था, यह घोषणा प्रतिवादी सं. 1 द्वारा दिनांक 16.12.2003 को उनके पक्ष में निष्पादित विक्रय-विलेख के आधार पर की गई थी, जो विधि के अनुसार विधिवत सिद्ध हो चुका है, अतः यह निर्णय विधिक और न्यायसंगत है, और इसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है। तदनुसार, इस न्यायालय द्वारा निर्धारित बिंदु सं. 2 और 3 का उत्तर वादी के विरुद्ध तथा प्रतिवादी सं. 3 और 4 के पक्ष में दिया जाता है।



32. परिणामस्वरूप, अपील खारिज होने योग्य है और तदनुसार इसे खारिज किया जाता है।

33. तदनुसार एक डिक्री तैयार की जाए।

सही/-

(नरेंद्र कुमार व्यास)

न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

